



2025:CGHC:38935-DB

प्रकाशनार्थ अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुरदाण्डिक अपील क्रमांक 1878/2019निर्णय सुरक्षित रखने का दिनांक 21.07.2025निर्णय पारित करने का दिनांक 06.08.2025

1- तोता प्रसाद उर्फ बाबा पिता रामा यादव, आयु लगभग 21 वर्ष, निवासी- ग्राम परपटिया, थाना कमलेश्वरपुर, जिला सरगुजा छत्तीसगढ़, जिला:सरगुजा(अंबिकापुर), छत्तीसगढ़

2- महेंद्र यादव पिता लक्ष्मण, आयु लगभग 23 वर्ष, निवासी- ग्राम परपटिया, थाना कमलेश्वरपुर, जिला सरगुजा छत्तीसगढ़, जिला: सरगुजा (अंबिकापुर), छत्तीसगढ़

...अपीलार्थीगण

विरुद्ध

1- छत्तीसगढ़ राज्य द्वारा: थाना लखनपुर, जिला सरगुजा छत्तीसगढ़, जिला: सरगुजा (अंबिकापुर), छत्तीसगढ़

...प्रत्यर्थी

अपीलार्थीगण की ओर से	:	संबंधित अपीलार्थीगण की ओर से श्री सुशील दुबे एवं श्री अमन उपाध्याय, अधिवक्तागण
प्रत्यर्थी/राज्य की ओर से	:	श्री अभिषेक सिंह, पैनल अधिवक्ता

खण्डपीठमाननीय न्यायमूर्ति श्रीमती रजनी दुबे, एवंमाननीय न्यायमूर्ति श्री अमितेन्द्र किशोर प्रसाद, न्यायाधीशगणसीएवी निर्णयद्वारा अमितेन्द्र किशोर प्रसाद, न्यायाधीश

1. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 374(2) के अधीन प्रस्तुत इस अपील में, वर्तमान अपीलार्थीगण ने विशेष न्यायाधीश, सरगुजा (अंबिकापुर), छत्तीसगढ़ द्वारा {अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण अधिनियम), 1989} (संक्षिप्त में, 'अधिनियम, 1989') विशेष सत्र (अत्याचार)



प्रकरण क्रमांक 15/2018 में दिनांक 18.09.2019 को पारित दोषसिद्धि एवं दण्डादेश के निर्णय की वैधता, विधिमान्यता एवं औचित्यता को चुनौती दी है। जिसमें एवं जिसके अन्तर्गत अपीलार्थी क्रमांक 1 व 2 को निम्नानुसार दोषसिद्ध एवं दण्डित किया है:-

दोषसिद्धि	दण्डादेश
भारतीय दण्ड संहिता की धारा 341 के अधीन (संक्षिप्त में भा.द.सं.)	पंद्रह दिवस का साधारण कारावास एवं 200/- रुपए का अर्थदण्ड एवं अर्थदण्ड राशि के संदाय के व्यतिक्रम की दशा में सात दिवस का अतिरिक्त साधारण कारावास
भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376(घ) के अधीन	20 वर्ष का सश्रम कारावास एवं 5000/- रुपए का अर्थदण्ड एवं अर्थदण्ड राशि के संदाय के व्यतिक्रम की दशा में एक वर्ष का अतिरिक्त सश्रम कारावास
भारतीय दण्ड संहिता की धारा 392/34 के अधीन	5 वर्ष का सश्रम कारावास एवं 1,000/- रुपए का अर्थदण्ड एवं अर्थदण्ड राशि के संदाय के व्यतिक्रम की दशा में छः माह का अतिरिक्त सश्रम कारावास

(समस्त दण्डादेशों को साथ-साथ चलाए जाने हेतु निर्देशित किया गया है)

2. अभियोजन का प्रकरण संक्षिप्त में यह है कि दिनांक 18.12.2017 को, लगभग 23 वर्षीय अभियोक्त्री, अंबिकापुर से बस द्वारा घर लौट रही थी। पंकजम गाँव पहुँचने के बाद, वह अपने घर की ओर पैदल जा रही थी, उसी समय, दो अज्ञात व्यक्ति नीले रंग की मोटरसाइकिल पर वहाँ आए और लाब्जी टुकरदान गाँव के पास उसे रोक लिया। इसके बाद, एक अभियुक्त ने उसका मोबाइल फोन छीन लिया और उसे बलपूर्वक घसीटते हुए पास के एक इलाके में ले गया, जहाँ उन्होंने एक-एक करके उसके साथ बलपूर्वक लैंगिक संबंध बनाए। अपराध को अंजाम देने के बाद, दोनों अज्ञात व्यक्ति अभियोक्त्री को जंगल में छोड़कर अपनी मोटरसाइकिल से उसका फोन लेकर मौके से भाग गए। इसके बाद, अभियोक्त्री अपने घर पहुँची और अपने परिवार को घटना की जानकारी दी। अभियोक्त्री की रिपोर्ट के आधार पर, अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध प्रथम सूचना प्रतिवेदन (प्र.पी.-7 व पी-35) पंजीबद्ध किया गया है।

3. विवेचना के दौरान, अभियोक्त्री (प्रदर्श पी.-18) के अनुसार घटनास्थल का नजरी नक्शा तैयार किया गया और अभियोक्त्री (प्रदर्श पी.-8) की सहमति लेने के बाद, उसे चिकित्सकीय परीक्षण के लिए भेजा गया जहाँ अ.सा.-2 डॉ. शारदा भगत ने उसका परीक्षण किया और हाल ही में हुए बलपूर्वक लैंगिक संबंध के संबंध में कोई निश्चित अभिमत नहीं दिया और न ही अभियोक्त्री के शरीर पर आंतरिक या बाह्य रूप से कोई चोट का निशान पाया और प्रदर्श पी.-5 के अनुसार उसे एमएलसी रिपोर्ट दी। अभियुक्तों को प्रदर्श पी.-28 और 29 के अनुसार अभिरक्षा में लिया गया और उन्हें चिकित्सकीय परीक्षण के लिए भी भेजा गया जहाँ अ.सा.-1 डॉ. आई.डी. भटनागर ने उनका परीक्षण किया और पाया कि वे संभोग करने



में सक्षम हैं और अपनी एमएलसी रिपोर्ट प्रदर्श पी.-1 और पी-2 के अनुसार दी। प्रदर्श पी.-10 के अनुसार, अभियोक्त्री के वीर्य के धब्बे वाले अंतर्वस्त्र जब्त किए गए। प्रदर्श पी.-11 के अनुसार, अभियोक्त्री का जाति प्रमाण पत्र जब्त किया गया। प्र.पी-26 के अनुसार, अपीलार्थी क्रमांक 2- महेंद्र यादव का मेमोरेण्डम कथन दर्ज किया गया, जिसके अनुसार, प्र.पी-27 के अनुसार, एक सफेद रंग का ओप्पो कंपनी का मोबाइल फोन जब्त किया गया। प्र.पी-24 के अनुसार, अभियोक्त्री की योनि स्लाइड जब्त की गई। प्र.पी-25 और प्र.27 के अनुसार, अभियुक्तों के अंतर्वस्त्र जब्त किए गए। जब्त की गई वस्तुओं को रासायनिक परीक्षण हेतु न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला भेजा गया और न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला प्रतिवेदन (प्र.डी-1) के अनुसार, जब्त की गई वस्तुओं पर वीर्य के धब्बे और मानव शुक्राणु पाए गए हैं, जिन पर 'ए, बी, सी और डी' अंकित हैं।

4. साक्षियों के कथन दर्ज किए गए और विवेचना पूर्ण होने के उपरांत, संबंधित विचारण न्यायालय में अभियुक्तों/अपीलार्थीगण के विरुद्ध अभियोग-पत्र प्रस्तुत किया गया। अभियुक्तों/अपीलार्थीगण ने अपने अपराध से इनकार किया और विचारण का निवेदन किया।

5. अभियोजन ने अपराध साबित करने के लिए, अपने प्रकरण के समर्थन में 11 साक्षियों का परीक्षण कराया और अपीलार्थीगण/अभियुक्तों को संबंधित अपराध से जोड़ने वाले 35 दस्तावेज प्रस्तुत किए। यद्यपि, अपने बचाव में, अपीलार्थीगण/अभियुक्तों ने एक साक्षी, अर्थात् ब.साक्षी-1 डॉ. श्रीमती एस. गौतम, का परीक्षण कराया और एक दस्तावेज, अर्थात् प्र.डी.-1, प्रस्तुत किया।

6. विचारण न्यायालय ने पक्षकारों के अधिवक्तागण को सुनने और अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्यों का परिशीलन करने के उपरांत, अपीलार्थीगण को अधिनियम, 1989 की धारा 3(2)(v) के अधीन अपराध से दोषमुक्त कर दिया, किंतु उन्हें इस निर्णय के प्रारंभिक पैरा में उल्लिखित अनुसार सिद्धदोष व दण्डित किया, जिसके विरुद्ध अपीलार्थी क्रमांक 1 व 2 द्वारा यह अपील प्रस्तुत की गई है, जिसमें दोषसिद्धि एवं दण्डादेश के आक्षेपित निर्णय को प्रश्नगत किया गया है।

7. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क किया कि अभियोजन, अपीलार्थीगण के विरुद्ध प्रकरण को युक्तियुक्त संदेह से परे साबित करने में पूर्णतया विफल रहा है। उन्होंने आगे यह भी तर्क किया कि इस तथ्य को साबित करने के लिए कोई ठोस और निर्णायक साक्ष्य अभिलेख में नहीं है कि अपीलार्थी ही प्रश्नाधीन अपराध के कर्ता हैं। उन्होंने आगे यह भी तर्क किया कि यद्यपि न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला प्रतिवेदन जब्त की गई वस्तुओं पर वीर्य के धब्बे और मानव शुक्राणुओं की पुष्टि करती है, किंतु अभियोजन द्वारा इस तथ्य को साबित करने के लिए कि वीर्य के धब्बे और मानव शुक्राणु वर्तमान अपीलार्थीगण के हैं कोई डीएनए परीक्षण नहीं कराया गया है। उन्होंने आगे यह भी तर्क किया कि



अ.सा.-2 डॉ. शारदा भगत जिन्होंने अभियोक्त्री का परीक्षण किया ने अभियोक्त्री के साथ हाल ही में हुए बलपूर्वक लैंगिक संबंध के संबंध में कोई निश्चित अभिमत नहीं दिया तथा अभियोक्त्री के शरीर पर कोई बाहरी या आंतरिक चोट भी नहीं पाई। इसलिए, दोषसिद्धि एवं दण्डादेश का आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाए तथा अपीलार्थीगण को उपरोक्त आरोपों से दोषमुक्त किया जाए।

8. दूसरी ओर, आक्षेपित निर्णय का समर्थन करते हुए, राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया कि अभियुक्तों/अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि एवं दण्डादेश पूर्णतया विधि सम्मत है और इसमें कोई अवैधता या दोष नहीं है जिसमें इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप किया जाए।

9. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण को सुना है और अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य का अत्यंत सावधानीपूर्वक परिशीलन किया है।

10. विचारण के दौरान, प्रथम अवधारणीय प्रश्न अपीलार्थी की प्रश्नाधीन अपराध में संलिप्तता का आधार है। तत्पश्चात अवधारणीय विवाद्यक यह है कि क्या अपीलार्थी उक्त अपराध कारित करने हेतु उत्तरदायी हैं।

11. अपराध की प्रकृति को दृष्टिगत रखते हुए, सर्वप्रथम अभियोजन और पीड़ित द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर विचार करना उपयुक्त होगा।

12. अ.सा.-3 ने अपने कथन में कहा है कि दिनांक 18.12.2017 को वह अंबिकापुर से बस द्वारा घर आ रही थी और लगभग दोपहर 3:00 से 3:30 बजे के बीच पंकजम गाँव पहुँची और अपने घर की ओर बढ़ी। रास्ते में, दो लड़के मोटरसाइकिल पर आए और उसे रोक लिया। उनमें से एक अभियुक्त महेंद्र यादव ने उसका दाहिना हाथ पकड़ लिया, जबकि दूसरे तोता प्रसाद यादव ने उसका मोबाइल फोन छीन लिया और उसके बाद, दोनों अभियुक्तों ने उसे ज़मीन पर धकेल दिया, जान से मारने की धमकी दी और एक-एक करके उसके साथ बलपूर्वक लैंगिक संबंध बनाए। उसने आगे कथन किया कि घटना के बाद, वे उसे जंगल में छोड़कर भाग गए। तत्पश्चात, वह अपने घर आई और अपने परिवार को घटना की जानकारी दी। यद्यपि, इसके विपरीत, अपने प्रतिपरीक्षण में, उसने स्वीकार किया कि वह घटना से पहले अभियुक्तों को नहीं जानती थी और उसने प्रारंभ में अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध रिपोर्ट दर्ज कराई थी। उसने आगे स्वीकार किया कि अपने पुलिस कथन में, उसने कहा था कि जब पुलिस ने अभियुक्तों को पकड़ा और उन्हें पुलिस वाहन में चिकित्सकीय परीक्षण के लिए ले जा रही थी, तो पुलिस ने उसे अभियुक्त दिखाए और पूछा कि क्या वे वही व्यक्ति हैं। उन्हें देखकर, उसने उन्हें अपराधकर्ता अपराधियों के रूप में पहचाना। उसने यह भी स्वीकार किया कि जब पुलिस ने उसे बताया कि उन्होंने अभियुक्तों से



उसका मोबाइल फोन बरामद किया है, तब उसने कहा कि वे वही लोग थे जिन्होंने अपराध कारित किया था। उसने यह भी स्वीकार किया कि उसने अभियुक्तों को पुलिस थाने में देखा था और उसके आधार पर, उसने बाद में जेल में उनकी पहचान की।

13. अभियोक्त्री के साक्ष्य से यह स्पष्ट है कि घटना के समय वह अभियुक्तों को नाम या पहचान से नहीं जानती थी। उसने अपने प्रतिपरीक्षण में स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि उसने अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध रिपोर्ट दर्ज कराई थी और उसे अभियुक्तों की पहचान पुलिस द्वारा गिरफ्तार किए जाने के बाद ही पता चली। पहचान का यह तरीका, जिसमें अभियोक्त्री ने सर्वप्रथम अभियुक्तों की पहचान तब की जब वे पहले से ही पुलिस अभिरक्षा में थे और उन्हें चिकित्सकीय परीक्षण के लिए ले जाया जा रहा था, प्रक्रिया की निष्पक्षता और विश्वसनीयता पर गंभीर संदेह उत्पन्न करता है। यह दण्डिक न्यायशास्त्र का एक सुस्थापित सिद्धांत है कि पुलिस अभिरक्षा में रहते हुए पहली बार किसी अभियुक्त की पहचान स्वाभाविक रूप से सांकेतिक होती है और इसे महत्वपूर्ण साक्ष्य नहीं माना जा सकता जब तक कि पहचान परेड (टीआईपी) की पुष्टि उचित रूप से न्यायिक पर्यवेक्षण में नहीं की जाती। वर्तमान प्रकरण में, कोई टीआईपी नहीं की गई थी और टीआईपी के अभाव में और जिस तरह से अभियुक्त व्यक्तियों को उनकी गिरफ्तारी के बाद और पुलिस अभिरक्षा में रहते हुए पहचान के लिए अभियोजन को दिखाया गया, वह पहचान प्रक्रिया को अत्यधिक संदिग्ध और विधिक रूप से असंभारणीय बनाता है।

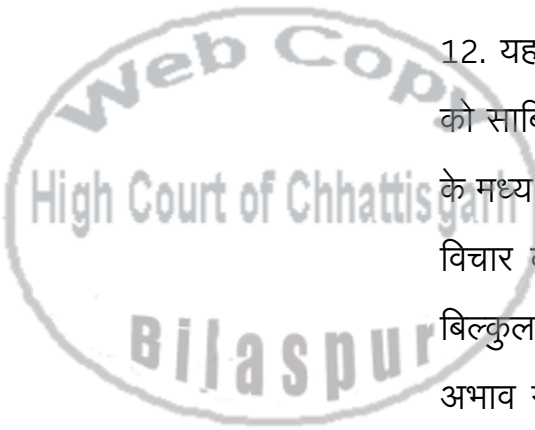
14. माननीय उच्चतम न्यायालय ने परवीन उर्फ सोनू विरुद्ध हरियाणा राज्य के प्रकरण में, जो विशेष अनुमति याचिका (दा.) क्रमांक 5438/2020 से प्रोद्भूत था, टीआईपी से संबंधित विवाद्यक पर विचार करते हुए, निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:-

“11. विचारण न्यायालय ने मुख्य रूप से चिकित्सकीय परीक्षण और अ.सा.-20, अ.सा.-22 और अ.सा.-23 के कथनों के आधार पर अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया है। अभियोजन के प्रकरण के अनुसार भी, केवल चार अभियुक्त ही ट्रेन में चढ़े थे और उनमें से एक, जिसकी पहचान विनोद के रूप में हुई है, ने उनकी आँखों में मिर्च पाउडर फेंका था और दूसरे अभियुक्त अमरजीत ने प्रधान आरक्षक अर्जुन सिंह पर गोली चलाई थी। अ.सा.-20 की प्रतिपरीक्षण से यह भी स्पष्ट है कि डिब्बे में लगभग 50-60 यात्री थे, किंतु किसी की भी परीक्षण नहीं कराया गया। यहाँ तक कि अ.सा.-22 आरक्षक सतबीर, जिसने अ.सा.-20 के कथन की पुष्टि की है, ने केवल विनोद और अमरजीत सिंह के नाम बताए। इस अस्पष्ट और बेबाक कथन के अलावा कि



अपीलार्थी कथित षडयंत्र का सदस्य है, षडयंत्र साबित करने के लिए अभिलेख पर कोई अन्य स्वीकार्य साक्ष्य नहीं है। अज्ञात कारणों से, इसी प्रकृति के एक प्रकरण में, अन्वेषण अभिकरण ने टीआईपी (पहचान परेड) नहीं कराया है। सह-अभियुक्तों के कथित संस्वीकृति कथनों के अतिरिक्त, अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने के लिए कोई अन्य साक्ष्य अभिलेख में नहीं है। यह भी हमारे विचार में लाया गया है कि अपीलार्थी पर बोलेरो छीनने के लिए दाण्डिक अपील@विशेष अनुमति याचिका (दा.)सं.5438/ 2020 दाण्डिक प्रकरण क्रमांक 535 वर्ष 2009 में एचसीएस, न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, भिवानी के न्यायालय में, अभियोजन चलाया गया था। उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 392, 216 के सहपठित धारा 34 के अधीन अपराधों के आरोप से दोषमुक्त कर दिया गया था और उक्त निर्णय अंतिम हो गया है।

12. यह सुस्थापित है कि धारा 120-ख के दायरे में, षडयंत्र के आरोप को साबित करने के लिए, यह स्थापित करना आवश्यक है कि पक्षकारों के मध्य अवैध कृत्य करने के लिए एक समझौता हुआ था। साथ ही, यह विचार करने योग्य है कि प्रत्यक्ष साक्ष्य द्वारा षडयंत्र स्थापित करना बिल्कुल भी कठिन नहीं है, किंतु साथ ही, किसी भी ऐसे साक्ष्य के अभाव में जो यह दर्शाता हो कि षडयंत्रकारियों के मध्य किसी अवैध कृत्य को करने के उद्देश्य से कोई सहमति थी, किसी व्यक्ति को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 120-ख के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध करना सुरक्षित नहीं है। अभियोजन कुछ अंशों पर निर्भर करता है, और कुछ अंशों को, अभियुक्त को दाण्डिक षडयंत्र के अपराध से जोड़ने के लिए पर्याप्त नहीं माना जा सकता। यहाँ तक कि सह-अभियुक्तों के कथित संस्वीकृति कथन भी, अन्य स्वीकार्य संपुष्टिकारी साक्ष्यों के अभाव में, अभियुक्त को दोषसिद्ध करने के लिए सुरक्षित नहीं हैं। इंद्रा दलाल विरुद्ध हरियाणा राज्य¹ के प्रकरण में, इस न्यायालय ने केवल संस्वीकृति कथन और अपराध में प्रयुक्त वाहन की बरामदगी के आधार पर दोषसिद्धि पर विचार किया है। उक्त प्रकरण में, दाण्डिक अपील@विशेष अनुमति याचिका (दा.)संख्या 5438/2020 में दोषसिद्धि को अपास्त करते हुए, इस न्यायालय ने कण्डिका 16 और 17 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:





16. उपर्युक्त प्रावधान के पीछे का दर्शन इस कठोर वास्तविकता को स्वीकार करना है कि पुलिस अधिकारियों द्वारा उत्पीड़न और यातना या यहाँ तक कि प्रलोभन का प्रयोग करके बलपूर्वक संस्वीकृति प्राप्त की जाती है और इसलिए, वे किसी भी विश्वसनीयता के योग्य नहीं हैं। यह प्रावधान अभियुक्त के विरुद्ध साक्ष्य से उसके द्वारा किसी पुलिस अधिकारी के समक्ष दिए गए संस्वीकृति को पूरी तरह से बाहर कर देता है। यह प्रावधान उन संस्वीकृति पर भी लागू होता है जो किसी ऐसे पुलिस अधिकारी के समक्ष दिए गए हों जो अन्यथा उस रूप में कार्य नहीं कर रहा हो। यदि वह एक पुलिस अधिकारी है और उसकी उपस्थिति में, किसी भी क्षमता में संस्वीकृति की गई हो, तो वह साक्ष्य में अस्वीकार्य हो जाता है। यह इस प्रावधान के अंतर्गत निहित विधि का मूल नियम है और इस कठोर नियम को इस न्यायालय और उच्च न्यायालयों द्वारा अनगिनत बार दोहराया गया है।

17. "संस्वीकृति" शब्द को कहीं भी परिभाषित नहीं किया गया है। यद्यपि, न्यायालयों ने शब्दकोश के अर्थ का आश्रय लिया है और स्पष्ट किया है कि अभियुक्त द्वारा पुलिस को दिए गए ऐसे कथन, जो अपराध के होने का अनुमान लगाते हैं, संस्वीकृति के समान होंगे और इसलिए इस प्रावधान के अधीन अस्वीकार्य हैं। इसे अपराध की प्रत्यक्ष स्वीकृति के रूप में भी परिभाषित किया गया है, न कि किसी भी दोषपूर्ण तथ्य की स्वीकृति के रूप में, चाहे वह कितना भी गंभीर या निर्णायक क्यों न हो। साक्ष्य अधिनियम की धारा 26 उन सभी संस्वीकृति को अस्वीकार्य बनाती है जब वह किसी व्यक्ति द्वारा पुलिस अधिकारी की अभिरक्षा में रहते हुए की गई हो, जब तक कि ऐसी संस्वीकृति मजिस्ट्रेट की साक्षात् उपस्थिति में नहीं की गई हो। इसलिए, जब कोई व्यक्ति पुलिस अभिरक्षा में हो, तो उसके द्वारा किसी तीसरे व्यक्ति, यानी पुलिस अधिकारी के अलावा, के सामने की गई संस्वीकृति भी अस्वीकार्य हो जाएगी।

13. इसके अतिरिक्त, उप्पा उर्फ मंजूनाथ विरुद्ध कर्नाटक राज्य 2 के प्रकरण में, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि जब किसी अभियुक्त को दोषसिद्ध किया जाता है और कारावास से दण्डित किया



जाता है, तो उच्च न्यायालय द्वारा दण्ड की पुष्टि केवल तभी उचित है जब तात्त्विक साक्ष्यों के विश्लेषण के उपरांत ठोस कारण दिए गए हों। वर्तमान प्रकरण में, उच्च न्यायालय के निर्णय के परिशीलन से ज्ञात होता है कि कथनों का उल्लेख करने के अलावा, उच्च न्यायालय ने साक्ष्यों पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया और विचारण न्यायालय के आदेशानुसार दोषसिद्धि एवं दण्डादेश की पुष्टि की। विद्वान अतिरिक्त अटॉर्नी जनरल द्वारा फिरोजुद्दीन बशीरुद्दीन व अन्य विरुद्ध केरल राज्य 3 और राजू मांझी विरुद्ध बिहार राज्य 4 के प्रकरण में जिन निर्णयों का अवलंब लिया गया है, वे प्रकरण के तथ्यों और अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्यों को देखते हुए अभियोजन के प्रकरण का समर्थन करने में सहायक नहीं हैं।

14. अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्यों की गहन परीक्षण के उपरांत, हमारा यह सुविचारित अभिमत है कि अभियोजन अपना प्रकरण साबित करने में विफल रहा है कि अपीलार्थी ने अन्य अभियुक्तों के साथ मिलकर उन अपराधों के लिए षडयंत्र रचा है जिनके लिए उस पर आरोप लगाया गया था। सह-अभियुक्तों के कथित संस्वीकृति कथनों के अलावा और किसी अन्य संपुष्टिकारी साक्ष्य के अभाव में अपीलार्थी पर अधिरोपित दोषसिद्धि एवं दण्डादेश को यथावत रखना सुरक्षित नहीं है। विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को मुख्यतः इस आधार पर दोषसिद्ध किए जाने के निष्कर्ष कि वह विचाराधीन अपराध के षडयंत्रकारियों में से एक था, दोषपूर्ण और अवैध हैं। उच्च न्यायालय ने अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्यों पर उचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया है और अपीलार्थी पर अधिरोपित दोषसिद्धि एवं दण्डादेश की त्रुटिपूर्ण पुष्टि की है।

15. उपरोक्त के अलावा, वर्तमान प्रकरण में चिकित्सा साक्ष्य हाल ही में बलपूर्वक लैंगिक संबंध बनाने के आरोप का समर्थन नहीं करते हैं। चिकित्सा अधिकारी, अ.सा.-2 डॉ. शारदा भगत ने अभियोक्त्री का परीक्षण करने पर, उसके शरीर पर कोई बाहरी या आंतरिक चोट के निशान नहीं पाए। इसके अतिरिक्त, अ.सा.-2 ने अभियोक्त्री के साथ हाल ही में हुई लैंगिक गतिविधि के संबंध में कोई निर्णायक अभिमत नहीं दिया। इसके अतिरिक्त, यद्यपि न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला प्रतिवेदन (प्र.डी.-1) जब्त की गई वस्तुओं पर वीर्य के धब्बे और मानव शुक्राणुओं की उपस्थिति की पुष्टि करती है, किंतु अभियोजन जैविक तत्व का अभियुक्त व्यक्तियों से मिलान करने के लिए डीएनए विश्लेषण करने में विफल रहा है।





16. छोटकऊ विरुद्ध उत्तर प्रदेश राज्य, (2023) 6 एससीसी 742 के प्रकरण में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने कण्डिका -80 में निम्नानुसार अवधारित किया है:

"80. यह कहने के बाद कि धारा 53 क अनिवार्य नहीं है, इस न्यायालय ने उक्त निर्णय के कण्डिका 54 में पाया कि अभियोजन द्वारा डीएनए साक्ष्य प्रस्तुत करने में विफलता के कारण प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना आवश्यक है। कण्डिका 54 निम्नानुसार है: (राजेंद्र प्रहलादराव वासनिक विरुद्ध महाराष्ट्र राज्य, (2019) 12 एससीसी 460 एससीसी पृष्ठ 485)

"54. अभियोजन द्वारा डीएनए साक्ष्य प्रस्तुत करने से इनकार करना थोड़ा दुर्भाग्यपूर्ण होगा विशेषतया जब देश में डीएनए प्रोफाइलिंग की सुविधा उपलब्ध है। अभियोजन को इसका लाभ उठाने की सलाह दी जाएगी, खासकर दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 53 क और धारा 164 क प्रावधानों के दृष्टिगत। हम यह सुझाव देने की हद तक नहीं जा रहे हैं कि यदि डीएनए प्रोफाइलिंग नहीं है, तो अभियोजन का प्रकरण साबित नहीं हो सकता किंतु हमारा निश्चित रूप से यह मानना है कि जहाँ डीएनए प्रोफाइलिंग नहीं की गई है या इसे विचारण न्यायालय से रोका गया है, वहाँ अभियोजन के लिए प्रतिकूल परिणाम होंगे।"

17. कृष्ण कुमार मलिक विरुद्ध हरियाणा राज्य, (2011) 7 एससीसी 130 के प्रकरण में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने कण्डिका-44 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

"44. अब, प्रत्यर्थी-राज्य के विद्वान अधिवक्ता द्वारा हमारे विचार में लाए गए, दिनांक 23.06.2006 से दंड प्रक्रिया संहिता में धारा 53 (क) के शामिल किए जाने के बाद, अभियोजन के लिए ऐसे प्रकरणों में डीएनए परीक्षण करवाना आवश्यक हो गया है, जिससे अभियोजन को अभियुक्त के विरुद्ध अपना प्रकरण साबित करने में सुविधा होगी। 2006 से पूर्व, द.प्र.सं. में उपरोक्त विशिष्ट प्रावधान के बिना भी, अभियोजन अभी भी डीएनए परीक्षण या विश्लेषण करवाने और अपीलार्थी के वीर्य का मिलान अभियोक्त्री के अंतर्वस्त्रों पर पाए गए वीर्य से करने की इस



प्रक्रिया का आश्रय ले सकता था ताकि प्रकरण पूरी तरह से सुरक्षित हो सके, किंतु उन्होंने ऐसा नहीं किया, इसलिए उन्हें इसके परिणाम भुगतने होंगे।”

18. इसके अतिरिक्त, गणेशन विरुद्ध राज्य प्रतिनिधि द्वारा पुलिस निरीक्षक(2020) 10 एससीसी 573 में प्रकाशित प्रकरण में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अवधारित व अभिनिर्धारित किया कि पीड़िता/अभियोक्त्री की एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि हो सकती है, जब अभियोक्त्री का कथन भरोसेमंद, निष्कलंक, विश्वसनीय पाया जाए और उसका साक्ष्य उत्कृष्ट गुणवत्ता का हो। सुसंगत कण्डिका नीचे उद्धृत हैं:-

“9. वर्तमान प्रकरण में, अपीलार्थी अभियुक्त को विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा धारा 7 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है, जो पोक्सो अधिनियम की धारा 8 के अधीन दंडनीय है। हमने विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित संपूर्ण निर्णय और अभिलेख पर प्रस्तुत सुसंगत साक्ष्यों विशेष रूप से पीड़िता के पिता अ.सा.1, पीड़िता की माता अ.सा.2 और स्वयं पीड़िता अ.सा.3 के कथनों का परिशीलन किया है। यह सत्य है कि पीड़िता की माता अ.सा.2 अपने कथन से पक्षद्रोही हो गई है। यद्यपि, पीड़िता अ.सा.3 ने अभियोजन के प्रकरण का पूर्ण समर्थन किया है। उसने विस्तारपूर्वक बताया है कि घटना कैसे हुई। उसका पूर्णतया प्रतिपरीक्षण कराया गया है। हमें पीड़िता अ.सा.3 के कथन पर विश्वास न करने का कोई ठोस कारण नहीं दिखता। बयान के समय अ.सा.3 की आयु 15 वर्ष है परिपक्व है। वह विश्वसनीय और भरोसेमंद है। विधि के सुस्थापित सिद्धांत के अनुसार, पीड़िता की एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर भी दोषसिद्धि हो सकती है, यद्यपि, उसे विश्वसनीय और भरोसेमंद पाया जाना चाहिए।

9.1 क्या लैंगिक उत्पीड़न, छेड़छाड़ आदि से जुड़े प्रकरण में, अभियोक्त्री की केवल साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि हो सकती है, विजय उर्फ चीनी (पूर्वोक्त) के प्रकरण में, कण्डिका 9 से 14 में निम्नानुसार अवधारित किया गया है:

“9. महाराष्ट्र राज्य विरुद्ध चंद्रप्रकाश केवलचंद जैन, (1990) 1 एससीसी 550 में, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि लैंगिक



हमले की शिकार महिला, अपराध में सहयोगी नहीं है, बल्कि किसी अन्य व्यक्ति की वासना की शिकार है और इसलिए, उसके साक्ष्य का परीक्षण सहयोगी के समान संदेह के साथ नहीं किया जाना चाहिए। न्यायालय ने निम्नानुसार अवधारित किया: (एससीसी पृष्ठ 559, कण्डिका 16)

"16. लैंगिक अपराध की अभियोक्त्री को सहयोगी के समकक्ष नहीं रखा जा सकता। वह वास्तव में अपराध की पीड़ित है। साक्ष्य अधिनियम कहीं भी यह नहीं कहता कि उसके साक्ष्य को तब तक स्वीकार नहीं किया जा सकता जब तक कि उसकी पुष्टि भौतिक विवरणों से न हो। वह निस्संदेह धारा 118 के अधीन एक सक्षम साक्षी है और उसके साक्ष्य को वही महत्व दिया जाना चाहिए जो शारीरिक हिंसा के प्रकरणों में आहत व्यक्ति को दिया जाता है। उसके साक्ष्य के मूल्यांकन में उतनी ही सावधानी और सतर्कता बरती जानी चाहिए जितनी किसी आहत शिकायतकर्ता या साक्षी के प्रकरण में बरती जाती है, उससे ज्यादा नहीं। जरूरी यह है कि न्यायालय को इस बात का एहसास होना चाहिए कि वह उस व्यक्ति के साक्ष्य पर विचार कर रही है जो उसके द्वारा लगाए गए आरोप के परिणाम में रुचि रखता है। यदि न्यायालय इस बात को विचार में रखता है और संतुष्ट महसूस करता है कि वह अभियोजन की साक्ष्य पर कार्रवाई कर सकता है, तो साक्ष्य अधिनियम में धारा 114 के दृष्टांत (ख) के समान कोई विधिक नियम या प्रथा शामिल नहीं है जो उसे संपुष्टि की तलाश करने की आवश्यकता हो। यदि किसी कारण से न्यायालय अभियोजन की साक्ष्य का अवलंब लेने में संकोच करती है, तो वह ऐसे साक्ष्य की तलाश कर सकती है जो उसकी साक्ष्य को संपुष्टि के बिना आश्वस्त कर सके, जो किसी सहयोगी के प्रकरण में आवश्यक है। अभियोजन की साक्ष्य को पुष्ट करने के लिए आवश्यक साक्ष्य की प्रकृति अनिवार्य रूप से प्रत्येक प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर होनी चाहिए। किंतु यदि अभियोजन वयस्क है और पूरी तरह से समझदार है, तो न्यायालय उसके साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि का आधार बनाने की हकदार है, जब तक कि उसे कमजोर और अविश्वसनीय न दिखाया जाए। यदि प्रकरण के अभिलेख में दर्ज सभी परिस्थितियों से यह ज्ञात होता है कि अभियोजन के पास आरोपित व्यक्ति को झूठे तरीके से फंसाने का कोई ठोस हेतुक नहीं है, तो न्यायालय को सामान्यतः उसके साक्ष्य को स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं होनी चाहिए।





10. उत्तर प्रदेश राज्य विरुद्ध पप्पू, (2005) 3 एससीसी 594 इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसे प्रकरण में भी जहाँ यह दर्शाया गया हो कि बालिका सहज गुण वाली बालिका है या लैंगिक संबंध बनाने की आदी है, यह बलात्संग के आरोप से अभियुक्त की दोषमुक्ति का आधार नहीं हो सकता। यह स्थापित किया जाना चाहिए कि उस विशेष अवसर पर उसकी सहमति थी। अभियोक्त्री को कोई चोट न पहुँचना न्यायालय को अभियुक्त को दोषमुक्त करने का कारण नहीं बन सकता। न्यायालय ने आगे यह भी अभिनिर्धारित किया कि अभियोक्त्री की एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि हो सकती है और यदि न्यायालय अभियोक्त्री के कथन से संतुष्ट नहीं है, तो वह अन्य प्रत्यक्ष या परिस्थितिजन्य साक्ष्य मांग सकता है जिससे उसे उसके साक्ष्य का आश्वासन मिल सके। न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया: (एससीसी पृष्ठ 597, पैरा 12) "12. यह सुस्थापित है कि बलात्संग के अपराध की पीड़ित होने की शिकायतकर्ता अभियोक्त्री अपराध के बाद सह-अपराधी नहीं है। ऐसा कोई विधिक नियम नहीं है कि उसकी साक्ष्य पर भौतिक विवरणों की पुष्टि के बिना कार्रवाई नहीं की जा सकती। वह एक घायल साक्षी से उँचे स्थान पर है। बाद वाले प्रकरण में, शारीरिक रूप से चोट पहुँचती है, जबकि पहले वाले प्रकरण में यह शारीरिक के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक दोनों रूप से होती है। यद्यपि, यदि तथ्यों की न्यायालय को अभियोक्त्री के कथन को उसके प्रथम दृष्टया स्वीकार करना कठीन प्रतीत होता है, तो वह प्रत्यक्ष या परिस्थितिजन्य साक्ष्य की तलाश कर सकती है, जो उसकी साक्ष्य को संपुष्टि प्रदान करे। एक सहयोगी के संदर्भ में समझे गए आश्वासन के बिना, आश्वासन ही पर्याप्त होगा।"

11. पंजाब राज्य विरुद्ध गुरमीत सिंह, (1996) 2 एससीसी 384 में, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि लैंगिक उत्पीड़न, छेड़छाड़ आदि से जुड़े प्रकरणों में, न्यायालय का कर्तव्य है कि वह ऐसे प्रकरणों को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ निराकरण करें। अभियोजन की ओर से किए गए कथन में मामूली विरोधाभास या महत्वहीन विसंगतियाँ, अन्यथा विश्वसनीय अभियोजन के प्रकरण को खारिज करने का आधार नहीं होनी



चाहिए। लैंगिक उत्पीड़न की पीड़िता का साक्ष्य दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त है और इसके लिए किसी संपुष्टि की आवश्यकता नहीं है, जब तक कि संपुष्टि के लिए कोई ठोस कारण न हों। न्यायालय न्यायिक विवेकाधिकार को संतुष्ट करने के लिए उसके कथन के कुछ आश्वासनों की अपेक्षा कर सकता है। अभियोजन का कथन, आहत साक्षी की तुलना में अधिक विश्वसनीय है क्योंकि वह सह-अपराधी नहीं है। न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि लैंगिक अपराध के लिए प्रथम सूचना प्रतिवेदन पंजीबद्ध करने में विलंब को भले ही ठीक से समझाया न जा सके, किंतु यदि यह स्वाभाविक पाया जाता है, तो अभियुक्त को इसका कोई लाभ नहीं दिया जा सकता। न्यायालय ने निम्नानुसार अवधारित किया: (एससीसी पृष्ठ 39496 और 403, कण्डिका 8 और ... न्यायालय ने उस स्थिति को अनदेखा कर दिया जिसमें एक गरीब, असहाय अवयस्क बालिका स्वयं को तीन हताश युवकों की संगति में पा गई थी, जो उसे धमका रहे थे और उसे कोई भी शोर मचाने से रोक रहे थे। फिर, यदि विवेचना अधिकारी ने उचित रूप से विवेचना नहीं की या चालक या कार का पता न लगा पाने में लापरवाही बरती, तो यह अभियोजन की साक्ष्य को कलंकित करने का आधार कैसे बन सकता है? अभियोजन का अन्वेषण अभिकरण पर कोई नियंत्रण नहीं था और विवेचना अधिकारी की लापरवाही अभियोजन के कथन की विश्वसनीयता को प्रभावित नहीं कर सकती थी। ... न्यायालयों को, साक्ष्यों का मूल्यांकन करते समय, इस तथ्य के प्रति सजग रहना चाहिए कि बलात्संग के प्रकरण में, कोई भी स्वाभिमानी स्त्री न्यायालय में सिर्फ अपने सम्मान के विरुद्ध अपमानजनक कथन देने के लिए आगे नहीं आएगी, जैसे कि इस कृत्य उसके साथ बलात्संग में शामिल है। लैंगिक उत्पीड़न से जुड़े प्रकरणों में, ऐसे कथित विचार जिनका अभियोजन के प्रकरण की सत्यता पर कोई भौतिक प्रभाव नहीं पड़ता है या अभियोक्त्री के कथन में विसंगतियाँ भी हैं, उन्हें, जब तक कि विसंगतियाँ ऐसी न हों जो घातक प्रकृति की हों, अन्यथा विश्वसनीय अभियोजन के प्रकरण को खारिज करने की स्वीकृति नहीं दी जानी चाहिए। ... ऐसे प्रकरणों में, नियमानुसार, उसके कथन का अवलंब करने से पूर्व उसकी संपुष्टि की मांग करना, चोट पर नमक छिड़कने के समान है। ... अभियोक्त्री की साक्ष्य पर न्यायिक निर्भरता के





लिए संपुष्टि एक शर्त के रूप में, विधि की आवश्यकता नहीं है, बल्कि दी गई परिस्थितियों में विवेक का मार्गदर्शन है। ...

XXX XXX XXX

21. ... न्यायालयों को किसी प्रकरण की व्यापक संभावनाओं का परीक्षण करना चाहिए और अभियोक्त्री के कथन में छोटे-मोटे विरोधाभासों या महत्वहीन विसंगतियों जो घातक प्रकृति के नहीं हैं, से प्रभावित नहीं होना चाहिए, अन्यथा विश्वसनीय अभियोजन के प्रकरण को खारिज कर देते हैं। यदि अभियोक्त्री के साक्ष्य विश्वास प्रेरित करते हैं, तो उस पर उसके कथन की संपुष्टि हेतु भौतिक विवरणों की माँग किए बिना अवलंब लिया जाना चाहिए। यदि किसी कारण से न्यायालय को उसके परिसाक्ष्य पर पूर्णतः अवलंब लेना कठिन प्रतीत होता है, तो वह ऐसे साक्ष्य की तलाश कर सकती है जो उसके परिसाक्ष्य को आश्वस्त कर सकें, सह-अपराधी के प्रकरण में आवश्यक संपुष्टि के अलावा। अभियोक्त्री का साक्ष्य की पूरे प्रकरण की पृष्ठभूमि में विवेचना की जानी चाहिए और विचारण न्यायालय को लैंगिक उत्पीड़न से जुड़े प्रकरणों का निराकरण करते समय अपनी जिम्मेदारी के प्रति सजग और संवेदनशील होना चाहिए।" (मूल पर बल दिया गया है)

12. उड़ीसा राज्य विरुद्ध ठाकरा बेसरा, (2002) 9 एससीसी 86 में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि बलात्संग केवल शारीरिक हमला नहीं है, बल्कि यह अक्सर पीड़िता के संपूर्ण व्यक्तित्व को विचलित (नष्ट) कर देता है। बलात्कारी असहाय महिला की आत्मा को अपमानित करता है और इसलिए, अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य को पूरे प्रकरण की पृष्ठभूमि में विवेचना की जानी चाहिए और ऐसे प्रकरणों में, अन्य साक्षियों की भी गैर-परीक्षा अभियोजन के प्रकरण में कोई गंभीर दोष नहीं हो सकता है, खासकर जहाँ साक्षियों ने अपराध होते हुए नहीं देखा हो।

13. हिमाचल प्रदेश राज्य विरुद्ध रघुबीर सिंह, (1993) 2 एससीसी 622 में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि दोषसिद्धि का आदेश अभिलिखित करने से पूर्व अभियोक्त्री के साक्ष्य की संपुष्टि के लिए किसी अन्य साक्ष्य की तलाश करने की कोई विधिक बाध्यता नहीं है। साक्ष्य का मूल्यांकन किया जाना चाहिए, न कि उसकी गणना की जानी चाहिए। दोषसिद्धि अभियोक्त्री की एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर की



जा सकती है, यदि उसका साक्ष्य विश्वास प्रेरित करता है और ऐसी कोई परिस्थितियाँ नहीं हैं जो उसकी सत्यता के विरुद्ध हों। इसी प्रकार का दृष्टिकोण इस न्यायालय द्वारा वाहिद खान विरुद्ध मध्य प्रदेश राज्य (2010) 2 एससीसी 9 में दोहराया गया है, जिसमें रामेश्वर विरुद्ध राजस्थान राज्य, एआईआर 1952 एससी 54 में पारित एक पूर्ववर्ती निर्णय का अवलंब लिया गया है।

14. इस प्रकार, इस विवादक पर जो विधि उभर कर आता है, वह यह है कि अभियोक्त्री का कथन, यदि विश्वसनीय और भरोसेमंद पाया जाता है, तो उसे किसी संपुष्टि की आवश्यकता नहीं है। न्यायालय अभियोक्त्री के एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर अभियुक्त को दोषसिद्ध कर सकता है।

(बल दिया गया) 9.2 कृष्ण कुमार मलिक विरुद्ध हरियाणा राज्य (2011) 7 एससीसी 130 के प्रकरण में, इस न्यायालय ने यह अवधारित किया है कि बलात्संग के अपराध के लिए किसी अभियुक्त को दोषसिद्ध करने के लिए, अभियोक्त्री का एकमात्र साक्ष्य पर्याप्त है, बशर्ते कि वह विश्वास प्रेरित करे और पूर्णतया विश्वसनीय, निष्कलंक और उत्कृष्ट गुणवत्ता का प्रतीत हो। 9.3 किसे "उत्कृष्ट साक्षी" कहा जा सकता है, इस पर इस न्यायालय ने राय संदीप उर्फ दीपू विरुद्ध राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली), (2012) 8 एससीसी 21 के प्रकरण में विचार किया है। कण्डिका 22 में, यह अवधारित एवं अभिनिर्धारित किया गया है:

“22. हमारे सुविचारित अभिमत में, “उत्कृष्ट साक्षी” अत्यंत उच्च गुणवत्ता और योग्यता का होना चाहिए, इसलिए उसका कथन अखंडनीय होना चाहिए। ऐसे साक्षी के कथन पर विचार करने वाले न्यायालय को उसे बिना किसी संकोच के उसके अंकित मूल्य पर स्वीकार करने की स्थिति में होना चाहिए। ऐसे साक्षी की गुणवत्ता का परीक्षण करने के लिए, उसकी स्थिति महत्वहीन होगी और जो सुसंगत होगा वह है ऐसे साक्षी द्वारा दिए गए कथन की सत्यता। अधिक सुसंगत होगा कथन की सुसंगतता, प्रारंभ से अंत तक, अर्थात्, उस समय जब साक्षी प्रारंभिक कथन देता है और अंततः न्यायालय के समक्ष। यह स्वाभाविक और अभियोजन के प्रकरण के अनुरूप होना चाहिए। अभियुक्त के रूप में। ऐसे साक्षी के कथन में कोई



झूठ नहीं होना चाहिए। साक्षी किसी भी लंबाई और चाहे वह कितनी भी कठिन क्यों न हो, प्रतिपरीक्षण का सामना करने में सक्षम होना चाहिए और किसी भी परिस्थिति में उसे घटना के तथ्य, इसमें शामिल व्यक्तियों, और इसके क्रम के बारे में कोई संदेह नहीं होना चाहिए। ऐसा कथन अन्य सभी सहायक सामग्रियों, जैसे कि बरामदगी, प्रयुक्त हथियार, अपराध का तरीका, वैज्ञानिक साक्ष्य और विशेषज्ञ का अभिमत, से सहसंबंधित होना चाहिए। उक्त कथन हर दूसरे साक्षी के कथन से निरंतर मेल खाना चाहिए। यह भी कहा जा सकता है कि यह परिस्थितिजन्य साक्ष्य के प्रकरण में लागू किए गए परीक्षण के समान होना चाहिए, जहाँ परिस्थितियों की श्रृंखला में कोई भी ऐसी कड़ी नहीं होनी चाहिए जो अभियुक्त को उसके विरुद्ध कथित अपराध का दोषी ठहराए। केवल तभी जब ऐसे साक्षी का कथन उपरोक्त परीक्षण के साथ-साथ लागू किए जाने वाले अन्य सभी 12 समान परीक्षणों को भी पूरा करता हो, तभी यह माना जा सकता है कि ऐसे साक्षी को "उत्कृष्ट साक्षी" कहा जा सकता है, जिसका कथन न्यायालय द्वारा बिना किसी पुष्टि के स्वीकार किया जा सकता है और जिसके आधार पर दोषी को दंडित किया जा सकता है। अधिक सटीक रूप से, उक्त साक्षी का कथन अपराध का मूल दायरा बरकरार रहना चाहिए जबकि अन्य सभी संबंधित सामग्री, अर्थात् मौखिक, दस्तावेजी और भौतिक वस्तुएँ, भौतिक विवरणों में उक्त संस्करण से मेल खानी चाहिए ताकि विचारण न्यायालय, अन्य सहायक सामग्रियों को छांटने के लिए मूल संस्करण का अवलंब ले सके और कथित आरोप के लिए अपराधी को दोषसिद्ध कर सके। इस न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त निर्णयों में प्रतिपादित विधि की कसौटी पर अ.सा.3- पीड़िता के कथन का मूल्यांकन करने पर, हमारी राय है कि अ.सा.3- पीड़िता के एकमात्र परिसाक्ष्य पूर्णतया विश्वसनीय और निष्कलंकित है और उसका साक्ष्य उत्कृष्ट गुणवत्ता का है।

अतः, प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए, विद्वान विचारण न्यायालय ने पीड़िता के कथन के आधार पर अभियुक्त को दोषसिद्ध करने में कोई त्रुटि नहीं की है। विद्वान विचारण न्यायालय ने पोक्सो अधिनियम की धारा 8 के अधीन न्यूनतम दण्ड दिया है। इसलिए, विद्वान विचारण न्यायालय पहले ही उदारता दिखा चुका है। इस स्तर पर,



यह विचार करने योग्य है कि अभियुक्त के विरुद्ध आरोप, जो अ.सा.3 के कथन से साबित हुए हैं, बहुत गंभीर हैं, जिसे सभ्य समाज में स्वीकार नहीं किया जा सकता। अतः, पोक्सो अधिनियम के उद्देश्य और प्रयोजन को विचार में रखते हुए तथा अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्यों पर विचार करते हुए, उच्च न्यायालय ने पोक्सो अधिनियम की धारा 7 के अधीन अपराध के लिए अभियुक्त को दोषसिद्ध किया है और अभियुक्त को तीन वर्ष के कारावास से दण्डित किया है, जो पोक्सो अधिनियम की धारा 8 के अधीन न्यूनतम दण्ड है।

10. अब जहाँ तक विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत प्रतिकर की राशि का संबंध है, उच्च न्यायालय ने उसे संशोधित कर दिया है और राज्य को निर्देशित किया है कि वह पीड़ित को प्रतिकर प्रदान करें एवं तत्पश्चात, यदि उसे लगे कि अभियुक्त के पास पर्याप्त साधन हैं, तो उसे भू राजस्व के प्रावधानों के अधीन अभियुक्त से वसूल करे। अभियुक्त की ओर से यह तर्क किया गया है कि अभियुक्त बहुत गरीब है और उसके पास कोई संपत्ति नहीं है। यदि ऐसा है, तो उसे चिंता करने की कोई बात नहीं है। उच्च न्यायालय ने विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश को संशोधित करके उपरोक्त बातों का ध्यान रखा है।

11. अब जहाँ तक विनोद कुमार (पूर्वोक्त) प्रकरण में इस न्यायालय के निर्णय और सि.प्र.सं. के आदेश 41 नियम 31 का अवलंब लेने का संबंध है, चूँकि हमने स्वयं अपील के गुण-दोष के आधार पर सुनवाई की है और इस तथ्य पर विचार करते हुए कि तीन वर्षों के दण्ड में से, अपीलार्थी पहले ही दो वर्ष और तीन माह (लगभग) कारावास में व्यतीत कर चुका है, उक्त निर्णय अभियुक्त के लिए किसी भी प्रकार से सहायक नहीं होगा।”

19. इसके अतिरिक्त, माननीय उच्चतम न्यायालय ने कट्टावेल्लई @ दिवाकर विरुद्ध तमिलनाडु राज्य दण्डिक अपील क्रमांक 1672/2019 में जो 2025 लाइव्लॉ (एससी) 703 में भी प्रकाशित प्रकरण में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:-

“30. उपरोक्त विभिन्न कमियों को देखते हुए, यह तार्किक प्रश्न उठता है कि



स्वैब कहाँ थे? ; उन्हें फोरेंसिक विश्लेषण के लिए देर से क्यों भेजा गया? ; क्या उन्हें ठीक से संग्रहीत किया गया था? ; क्या पुलिस थाना का मालखाना जहाँ कुछ साक्षियों के अनुसार उन्हें रखा गया था, पर्याप्त रूप से सुसज्जित था या नहीं; यदि उन्हें अस्पताल में रखा गया था, तो क्या यह सुनिश्चित किया गया था कि स्टाफ का कोई अन्य सदस्य उन तक पहुँच न सके? ; वे किसकी अभिरक्षा में थे? ; यदि स्वैब क्षतिग्रस्त थे, तो महत्वपूर्ण साक्ष्यों के नष्ट होने के लिए किसे जिम्मेदार ठहराया जाएगा, आदि। इसी तरह के प्रश्न उथमापलायम के न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा 13 जून, 2011 को पारित आदेश के परिणामस्वरूप अभियुक्त से लिए गए वीर्य के नमूने के संबंध में भी उठते हैं। अ.सा.-56 बताता है कि उक्त नमूने 16 जून को एफएसएल, चेन्नई भेजे गए थे। 2011 में भेजे गए थे, किंतु बाद में वापस कर दिए गए। यह फिर से स्पष्ट नहीं है कि 13 और 16 जून 2011 के मध्य ऐसे नमूने कहाँ संग्रहीत किए गए थे; उनका प्रभारी कौन था और क्या उसने उन्हें सुरक्षित रखा था? ; उन्हें कैसे और किस स्थिति में भेजा गया था; उन्हें कब और क्यों वापस किया गया था-दुर्भाग्य से, इन सभी प्रश्नों का अभिलेख में कोई उत्तर नहीं मिलता है।

31. अनिल विरुद्ध महाराष्ट्र राज्य (2014) 4 एससीसी 69 में इस न्यायालय ने अवधारित किया है कि डीएनए प्रोफाइल का दाण्डिक अन्वेषण पर गहरा प्रभाव पड़ा है। डीएनए प्रोफाइल मान्य और विश्वसनीय है, किंतु यह प्रयोगशाला में गुणवत्ता नियंत्रण और प्रक्रियाओं पर भी निर्भर करता है। हम इस स्थिति को और बढ़ाते हुए कह सकते हैं कि गुणवत्ता नियंत्रण और प्रयोगशाला के बाहर की प्रक्रियाएं भी उतनी ही महत्वपूर्ण हैं जितनी कि यह सुनिश्चित करना कि एकत्रित नमूनों से सर्वोत्तम परिणाम प्राप्त किए जा सकें। हमें दुख के साथ यह दर्ज करना पड़ रहा है कि ऐसे कई प्रकरण हैं जिनमें डीएनए साक्ष्य उपलब्ध होने के बावजूद भी उन्हें इस कारण से खारिज करना पड़ा है कि संबंधित चिकित्सक द्वारा संग्रह के दौरान और बाद में, प्रयोगशाला में ले जाते समय, प्रयोगशाला के भीतर और उनसे प्राप्त परिणामों को जिस तरह से संभाला गया, वह सर्वोत्तम संभव प्रक्रिया के अनुरूप नहीं है जो यह सुनिश्चित करने पर केंद्रित हैं कि इस पूरी प्रक्रिया के दौरान नमूने पूर्वकालीन, स्वच्छ और जैविक रूप से उपयुक्त परिस्थितियों में रहें।



34. प्रकाश निषाद विरुद्ध महाराष्ट्र राज्य (2023) 16 एससीसी 357 एक 6 वर्षीय बालिका के साथ बलात्संग और हत्या से संबंधित प्रकरण था। वर्तमान प्रकरण की भांति, यह भी परिस्थितिजन्य साक्ष्य का प्रकरण था। अपीलार्थी द्वारा दिए गए प्रकटीकरण कथन के आधार पर, पुलिस को अवयस्क पीड़िता के योनि स्मीयर पर अपीलार्थी के कुछ वस्त्र और वीर्य के अंश मिले, जिसके आधार पर उसे दोषसिद्ध किया जाना था। इस न्यायालय को डीएनए साक्ष्य को इस आधार पर खारिज करना पड़ा कि नमूने एफएसएल को भेजने में विलंब हुआ था, जो कि अस्पष्ट था। यह अवधारित किया गया कि विलंब के कारण, संदूषण की सहगामी संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता। संबंधित प्रयोगशालाओं को नमूने भेजने में शीघ्रता की आवश्यकता पर बल दिया गया।

35. यह प्रकरण, संयोगवश, यदि दुर्भाग्यवश नहीं, तो उपरोक्त प्रकरणों जैसा ही एक अन्य प्रकरण है। डीएनए साक्ष्य उपलब्ध होने के बावजूद, इसे इस कारण से खारिज किया जाना चाहिए कि अपीलार्थी-दोषी की दोषसिद्धि के दौरान साक्ष्य के संग्रह, सील, भंडारण और उपयोग में उचित तरीकों और प्रक्रियाओं का पालन नहीं किया गया। जैसा कि हमने अवधारित किया है, डीएनए को काफी हद तक विश्वसनीय माना गया है, भले ही यह साक्ष्य केवल प्रमाणिक मूल्य का हो, बशर्ते कि इसका उचित तरीके से निराकरण किया जाए। पिछले दशकों में, दुनिया भर के कई क्षेत्रों में डीएनए साक्ष्य की सहायता से कई प्रकरण अपने तार्किक निष्कर्ष पर पहुँचे हैं। यह भी उतना ही सत्य है कि गलत तरीके से दोषी ठहराए गए कई लोगों को अंततः न्याय मिला है और इस तकनीक में हुई प्रगति के कारण उन्हें निर्दोष घोषित किया गया है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि ऐसी प्रगति के साथ-साथ, हमारे पास अभी भी ऐसे प्रकरण हैं जहाँ साक्ष्य उपलब्ध होने के बावजूद, उसे इस कारण से खारिज करना पड़ता है कि संबंधित व्यक्ति, चाहे वह चिकित्सक हों या विवेचक, ऐसे संवेदनशील साक्ष्यों को संभालने में लापरवाह रहे हैं।”

20. नाथू विरुद्ध राज्य 2025 एससीसी ऑनलाइन दिल्ली 2038 में प्रकाशित प्रकरण में, माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:—



“35. अभियोजन ने डीएनए रिपोर्ट (एक्स. अ.सा. 9/ए) का भी अवलंब लिया, जिससे यह स्थापित हुआ कि अभियोक्त्री से उत्पन्न बालक का जैविक रूप से पिता अपीलार्थी था। यह तथ्य विवादित नहीं है। यद्यपि, डीएनए रिपोर्ट केवल पितृत्व साबित करती है, यह अपने आप में सहमति की अनुपस्थिति को स्थापित नहीं करती और न ही कर सकती है। यह एक सामान्य विधि है कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध सहमति की अनुपस्थिति पर आधारित है। लैंगिक संबंधों का केवल साक्ष्य, भले ही गर्भावस्था हुई हो, बलात्संग साबित करने के लिए अपर्याप्त है जब तक कि यह भी साबित न हो कि यह कृत्य सहमति के बिना किया गया था। वास्तव में, आसपास की परिस्थितियाँ अभियोजन के प्रकरण को अत्यधिक असंभाव्य बनाती हैं।”

21. उपरोक्त निर्णयों के आलोक में, सबसे महत्वपूर्ण साक्ष्य यह है कि अभियोजन द्वारा डीएनए परीक्षण नहीं कराया गया ताकि यह स्थापित किया जा सके कि जब्त की गई वस्तुओं पर पाए गए वीर्य के धब्बे और मानव शुक्राणु वर्तमान अपीलार्थीगण के थे। डीएनए परीक्षण के अभाव में, न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला प्रतिवेदन केवल वीर्य के धब्बों और मानव शुक्राणुओं की उपस्थिति को साबित करती है, किंतु यह अभियुक्त व्यक्तियों को कथित लैंगिक उत्पीड़न से नहीं जोड़ती। इस प्रकार, फॉरेंसिक साक्ष्य प्रश्नाधीन अपराध में अभियुक्त व्यक्तियों की संलिप्तता को स्थापित करने में विफल होता है। एक दाण्डिक विचारण में, अभियोजन पर अभियुक्त के अपराध को युक्तियुक्त संदेह से परे साबित करने का भार होता है। वर्तमान प्रकरण में, अभियोजन अपने दायित्व का निर्वहन करने में विफल रहा है और अपने प्रकरण को युक्तियुक्त संदेह से परे साबित करने में भी विफल रहा है। अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य विश्वास प्रेरित नहीं करते हैं और दोषसिद्धि के लिए आवश्यक मानक से कम हैं।

22. इस प्रकरण को दृष्टिगत रखते हुए, हमारा यह सुविचारित अभिमत है कि **अपीलार्थी क्रमांक 1 तोता प्रसाद उर्फ बाबा और अपीलार्थी क्रमांक 2 महेन्द्र यादव** दोषमुक्ति के पात्र हैं और विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 341, 376(घ) और 392/34 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्धि एवं दण्डादेश पूर्णतः अनुचित है। इस प्रकार, अपीलार्थी क्रमांक 1 व 2 संदेह के लाभ के आधार पर उपरोक्त आरोप से दोषमुक्त किए जाने के पात्र हैं। तदनुसार, विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 18.09.2019 को पारित दोषसिद्धि एवं दण्डादेश, अपास्त किए जाने योग्य है।



23. फलस्वरूप, अपीलार्थी क्रमांक 1 और 2 के भारतीय दंड संहिता की धारा 341, 376(घ) व 392/34 के अंतर्गत दंडनीय अपराध को तथा विचारण न्यायालय द्वारा उन पर अधिरोपित दण्ड को एतद्वारा अपास्त किया जाता है। संदेह के लाभ के आधार पर उन पर विरचित उक्त आरोप से उन्हें दोषमुक्त किया जाता है। अपीलार्थीगण के जेल में होने की सूचना है, अतः हम निर्देश देते हैं कि यदि किसी अन्य प्रकरण में उनकी आवश्यकता न हो, तो उन्हें अविलंब जेल से रिहा किया जाए।

24. फलस्वरूप, दण्डिक अपील स्वीकार की जाती है।

25. दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 437-क के अनुपालन में, दोनों अपीलार्थीगण को संबंधित न्यायालय के समक्ष ₹25,000/- का व्यक्तिगत बंधपत्र और समान राशि के दो-दो जमानतदार प्रस्तुत करने हेतु निर्देशित किया जाता है। यह बंधपत्र छह माह के लिए प्रभावशील होगा और इसमें यह वचन शामिल होगा कि इस निर्णय के विरुद्ध विशेष अनुमति याचिका प्रस्तुत करने या अनुमति प्रदान करने की स्थिति में, अपीलार्थी सूचना प्राप्त होने पर उच्चतम न्यायालय के समक्ष उपस्थित होंगे।

26. रजिस्ट्री को निर्देशित किया जाता है कि वह विचारण न्यायालय के अभिलेख को इस निर्णय की एक प्रतिलिपि सहित अविलंब विचारण न्यायालय को सूचना एवं आवश्यक अनुपालन हेतु प्रेषित करे।

सही/-
(रजनी दुबे)
न्यायाधीश

सही/-
(अमितेंद्र किशोर प्रसाद)
न्यायाधीश

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।